gopalraj

आरती हर लेती है हर चिंता

आरती सृष्टि प्रक्रिया का एक तार्किक, प्रयोगातीत और विज्ञानपरक उपक्रम है। दार्शनिक दृष्टिकोंण से देखा जाए तो आरती में समस्त सृष्टि प्रक्रिया समायी हुई है। वस्तुतः इसमें बताया गया है कि कौन सा तत्व कैसे बना और उन तत्वों का अनुक्रम और व्युत्क्रम क्या है। छान्दोय उपनिषद् अर्थात् आत्मा से आकाश, आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल और जल से पृथ्वी की उत्पत्ति हुई है। वेदोक्त सृष्टि प्रक्रिया के अनुरुप आरती में पर्दा खुलते ही सर्व प्रथम साधक ईश्वर को देखता है। उसके प्रथम तत्व शब्द गुणक आकाश के प्रतीक शंख को बजाता है, फिर दूसरे तत्व वायु के प्रतीक चॅवर को डुलाता है अथवा वस्त्र से ही क्रिया प्रदर्शित करता है। इसके बाद तीसरे तत्व अर्थात् अग्नि अथवा धूप से आरती उतारता है। चौथे तत्व जल का प्रदर्शन कुंभारती स्वरुप करता है और अन्तिम पृथ्वी तत्व के लिए अपनी उंगली, अंगूठे आदि अंगों से मुद्राएं प्रदर्शित करता है। दार्शनिक सिद्धांत के अनुसार जिस क्रम से तत्व उत्पन्न होता

उस विलोम क्रम से ही एक दूसरे में विलीन हो जाता है और अंत में शेष रह जाता है एक मात्र आत्म तत्व। इसी प्रकार आरती में भी पूर्वोक्त अनुक्रम दिखाने के अनन्तर पुनः व्युत्क्रम आरंभ हो जाता है। पुनः प्रथम मुद्राएं और बाद में जल पूरित शंख भ्रमण, दीप आरती, चॅवर वस्त्र प्रदर्शन और अंत में शंख में लिया जल भक्तों पर छिड़क कर वही एकमात्र ईश्वरीय दर्शन और उनकी परम कृपा की अपेक्षा करता है। आरती का शास्त्रीय रुप वस्तुतः यही है। यदि शंख, वस्त्र, चॅवर उपक्रम नहीं हैं तो मात्र श्रद्धा से हाथ जोड़कर तत्वों से सम्बद्ध पांच उपक्रम-क्रियाएं करता है। यही सृष्टि क्रम के मनन करने का आध्यात्मिक सार-सत है।

हिन्दू वांग्मय में पूजा-अर्चना के पश्चात् आरती द्वारा अपनी भूलों की क्षमा-याचना हेतु प्रायश्चित् करने का विधान वर्णन सर्व विदित है। याचक अपने इष्ट देव से प्रार्थना करता है कि देव अज्ञानतावश किसी कर्म, पूजा-अर्चना में कहीं कोई त्रुटि रह गई हो तो उसके लिए क्षमा करें। मैंने जो मंत्रहीन, क्रियाहीन और भक्तिहीन पूजन किया है, आपकी कृपा से वह निर्विघ्न पूर्ण हो। आरती जिसको आरात्रिक, आरान्तिक अथवा नीराजन भी कहते हैं, पूजा-अर्चना, अनुष्ठान आदि के अंत में सम्पन्न की जाती है। पूजा-अर्चना में रह गयी त्रुटियां आरती उपक्रम से ही दूर होना मानी गई हैं।

स्कंदपुराण के अनुसार, पूजन मंत्रहीन और क्रियाहीन होने पर ही नीराजन कर लेने से उसमें समस्त पूर्णता आ जाती है।

हरि भक्तविलास में उल्लेख आता है कि आरती होते देखने मात्र से ही कष्टों का निवारण होता है और समस्त पुण्यों की प्राप्ति होती है। जो देवाधिदेव, चक्रधारी श्री विष्णु जी की आरती होते हुए देखता है वह सात जन्मों तक सत्कर्मों में जीवन न व्यतीत करने के बाद भी अन्ततः परम पद को प्राप्त होता है।

विष्णु धर्मोत्तर में वर्णन मिलता है कि जो कोई धूप और आरती को देखता है और दोनों हाथों से आरती ग्रहण कर लेता है, वह करोड़ों पीढ़ियों का उद्धार तो करता ही है, भगवान के परमपद को भी प्राप्त होता है।

आरती से जपने वाले मूल मंत्र, आरती में प्रयुक्त सामग्री, आरती उतारने का विधान आदि अनेक महत्वपूर्ण बातें सामान्यतः भक्तजनों से बहुत दूर हैं। यदि इनका भी श्रद्धा से पालन कर लिया जाए तो परिणाम और भी अधिक संतोषजनक सिद्ध हो सकते हैं। जिस देव का जिस मंत्र से पूजन किया जाता है, उस मंत्र के द्वारा तीन बार साधक को पुष्पांजलि देनी चाहिए और

gopalraj

शंख, घड़ियाल, घंटा आदि महावाद्यों के साथ जयकार करके और अपनी सामर्थ्यनुसार सोना, चांदी, अष्टधातु, पीतल आदि के पात्र में घृत अथवा कपूर से विषम संख्या की बत्तियां जला कर आरती करनी चाहिए।

सामान्यतः पांच बत्तियों से आरती उतारने की प्रथा चलन में है, इसको पंचदीप भी कहते हैं। एक, सात अथवा इससे भी अधिक विषम संख्या में भी बत्तियां बनाकर आरती की जाती है। अपने प्रयोजन के अनुरुप रुई अथवा कच्चे सूत की बत्ती को तदनुसार रंग से रंग कर भी बत्तियां बनाई जाती हैं।

पद्मपुराण के अनुसार कुंकुम, अगर, कपूर, घृत और चंदन की पांच या सात बत्तियां बनाकर अथवा रुई या घी की बत्तियां बनाकर घंटा, शंख आदि नाद के साथ आरती करना चाहिए। दीप माला के द्वारा, दूसरे जलयुक्त शंख से, तीसरे धुले हुए वस्त्र से, चौथे आम और पीपल आदि के पत्तों से और पांचवे साष्टांग दण्डवत् से आरती करनी चाहिए।

आरती उतारते समय सर्वप्रथम देव के चरणों में उसको सात बार घुमाना चाहिए। इसके बाद दो बार नाभिदेश और एक-एक बार मुखमंडल तथा अंत में सात बार समस्त अंग में उसको घुमाना चाहिए। यदि देवता की आरती के लिए उनका बीज मंत्र, नीराजन, महावाद्य, घंटिका आदि का पता न हो तो मात्र श्रद्धाभाव रखते हुए सर्व वेदों के बीज प्रणव ॐकार को ही ले लेना चाहिए और आरती इस प्रकार से देव के वाएं से दाएं से घुमाना चाहिए कि ॐ की आकृति बन जाए। किस देव की आरती कितने बार उतारी जाए इसका वर्णन भी शास्त्रों में मिलता है।

छान्दोग्य उपनिषद में आता है कि जिस देव की जितनी संख्या लिखी हो उतनी ही बार उनकी आरती उतारना चाहिए। जैसे विष्णु, आदित्यों में परिणित होने के कारण द्वादशात्मा माने गए हैं, इसलिए उनकी तिथि भी द्वादश है और महामंत्र भी द्वादशाक्षर है, अतः विष्णु जी की आरती बारह बार उतारनी चाहिए। सूर्य सप्त रश्मि है। सूर्य सप्तमी तिथि के अधिष्ठाता देव हैं इसलिए उसकी आरती सात बार उतारना चाहिए। दुर्गा जी की नव संख्या प्रसिद्ध है, नवमी तिथि है, नव अक्षर का ही नवार्ण मंत्र है अतः उनकी आरती भी नौ बार उतारनी चाहिए। रुद्र एकादश है अथवा शिव चतुर्दशी तिथि के अधिष्ठाता देव हैं अतः उनकी आरती ग्यारह अथवा चौदह बार उतारना चाहिए। गणेश जी चतुर्थ तिथि के अधिष्ठाता देव है। इसलिए उनकी आरती चार बार उतारना चाहिए। इसी प्रकार अन्य देवी-देवताओं की उनमें मंत्र, तिथि से सुनिश्चित

कर लेना चाहिए यदि कहीं किसी देव की आरती उतारने के संबंध में भ्रम उत्पन्न तो ॐकार की आकृति बनाते हुए उनमें बाएं से दाएं सात बार आरती घुमानी चाहिए। अधिकांशतः देखने में आता है कि आरती के इस मर्म से अधिकांश लोग अज्ञान है। आरती की लौ पर ध्यान केन्द्रित करते हुए सदैव भाव यही रखना चाहिए कि जिस प्रकार उसकी लौ सदैव उर्ध्वमुखी रहती है उसी प्रकार जीवन भी सदैव उर्ध्वगति को प्राप्त हो।

तांत्रिक और गुह्य दृष्टिकोंण से देखा जाए तो आरती उतारना वस्तुतः एक तांत्रिक उपक्रम ही है। बलैया लेना, बलिहारी जाना, बलि जाना, वारी जाना, न्यौछावर आदि उपक्रम आरती लेने के पीछे भाव यही है कि सब विघ्न-बाधाएं दूर हों। अघोर तंत्र में कौलाचारी चर्म दीपों में चर्बी के तेल के दीपक जलाकर अनेक अकोर साधनाएं आरती के द्वारा विभिन्न मुद्राएं बनाकर करते हैं।

जो भी है हमारी सनातन संस्कृति में आरती के पीछे कष्टों और दुःखों से निवारण का मर्म सर्वथा सत्य है। अध्यात्म के अनेक उपक्रमों में आरती के साथ उपजी आस्था के पीछे जीवन की पूर्णता और अंततः प्रभु दर्शन का सार-सत सुनिश्चित है। इस आस्था में जीवन यापन करने से साधकों को काम, अर्थ और धर्म लाभ मिलता ही मिलता है।

gopal

गोपाल राजू (वैज्ञानिक)

(राजपत्रित अधिकारी) अ.प्रा.